Shodhaamrit, Vol.-2; Issue-2 (July-Dec.) 2025 : Page No.-190-193

शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-2.0
Vol.-2; issue-2 (July-Dec.) 2025
Page No- 190-193

©2025 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

श्रीमती कंचन कुमारी
सहायक प्राध्यापक- हिन्दी विभाग,
श्री राधा कृष्ण गोयनका
महाविद्यालय,सीतामढ़ी, बिहार.

Corresponding Author :
श्रीमती कंचन कुमारी
सहायक प्राध्यापक- हिन्दी विभाग,
श्री राधा कृष्ण गोयनका
महाविद्यालय,सीतामढ़ी, बिहार.

छायावाद का दार्शनिक संदर्भ

साहित्य और दर्शन का गहरा अंतर्संबंध है। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। साहित्य जहाँ जीवन को कलात्मक रूप में उद्घाटित करता है, वहीं दर्शन, ज्ञान- चेतना से स्पंदित कर जीवन को आध्यात्मिक जीवन - चेतना से अनुस्यूत करता है। यही कारण है कि आधुनिक युग के साहित्य में दर्शन का सर्वाधिक प्रभाव परिलक्षित होता हुआ दिखाई पड़ता है। खासकर छायावादी कविता में दार्शनिक चेतना कोहरों की तरह लिपटा हुआ है। वस्तुतः दर्शन अनुभूत एवं साक्षात्कृत सत्य की युक्तियुक्त स्थापना है। इस अनुभूति एवं साक्षात्कारकर्ता के हृदय पक्ष तक तथा युक्तियुक्ता में बौद्धिक निरूपण की सम्यक व्यवस्था है। दर्शन तथा साहित्य में सभ्यता इस दृष्टि से है कि दोनों स्थापना का अपने अनुभव जगत की निश्छल अभिव्यंजन करते हैं, दोनों अपने अभिप्रेत को यथासंभव प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करना चाहते हैं, किन्तु दार्शनिक जहाँ प्रचलित विचारधाराओं की तुलना में अपने इष्ट की व्यंजना करता है, खंडन और मंडन या यह क्रम उसकी प्रक्रिया का प्रधान अंग है, वहाँ साहित्यकार खंडन मंडन सापेक्ष तार्किक को अत्यंत गुह्य रखते हुए अपने भावों की व्यंजना करता है, किन्तु केवल प्रतिपादन पक्ष से ही उसकी सफलता का मूल्यांकन नहीं किया जाता, उसका अनिवार्य लक्षण है, सहृदय में वैयक्तिक अनुभूति एवं रसमयता का संचार । दर्शन में विरोध संभव है, किन्तु साहित्य में विरोध होते हुए भी पाठक का प्रभावित हो जाना अनिवार्य है, जिसमें विरोध का प्रत्यक्षतः शमन हो जाता है। यही साधारणीकरण की वह अवस्था है, जिसमें कवि की भावना पाठक की भावना बन जाने में ही अपनी सार्थकता रहती है।

रीतिकाल के इति श्री होने के साथ ही जन-जीवन में परिवर्तन का सूत्रपात दृष्टिगोचर होने लगा। साहित्य स्त्रष्टा राजाश्रय की परिसीमाओं से मुक्त होकर युग-सजगता का अनुभव करने लगा। युग की भाव - संपदा ने समसामयिक सजग साहित्यिक वृंद की वाणी में अपना प्रतिनिधित्व प्राप्त किया तथा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के नेतृत्व में विकसित काव्यधारा ने अपने नेता के अनुरूप 'भारतेन्दु- युग' का अभिधान स्वीकार

किया।

छायावाद की प्रेरणा एवं पृष्ठभूमि के निर्माण का श्रेय पर्याप्त सीमा तक पूर्ववर्ती द्विवेदीयुग तथा उसमें भी युगप्रवर्तक महावीर प्रसाद द्विवेदी के नीति एवं आदर्श प्रधान सबल व्यक्तित्व को ही है। भारतेन्तुयुग के उपरांत द्विवेदीयुग और द्विवेदीयुग के उपरांत छायावादयुग का का यह सजग क्रम हिन्दी काव्य जगत का सौभाग्य कहा जा सकता है, जिसमें क्या भाव क्या भाषा सभी दृष्टियों से एक निश्चित विकास दिखाई देता है। काव्य-क्षेत्र में यह मान्यता प्रचलित है कि एक के बाद दूसरी काव्यधारा का विकास विरोधजन्य या प्रतिक्रियाजन्य होता है और इसी मान्यता के आलोक में छायावाद का जन्म द्विवेदी युगीन इति-वृत्तात्मकता की प्रतिक्रिया स्वरूप स्वीकार किया जाता है, लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि इन तीनों युगों में परस्पर संबंध है, तीनों युग एक सूत्र में अनुस्यूत हैं, जिनमें प्रत्येक अपने पूर्ववर्ती युग के अभाबों को भावों में परिणत कर कुछ आगे बढ़ जाने के लिए प्रयत्नशील है और इस विकास का चरम सोपान छायावाद के रूप में परिलक्षित होता है।

भारत में दार्शनिक चिंतन पर्याप्त समृद्ध रहा है। आदि ग्रंथ वेद से ही इसका विकास सूत्र स्पष्ट होने लगता है। आधुनिक काल में हिन्दी के छायावादी कवियों ने वैदिक मंत्र द्रष्टा ऋषियों की जिज्ञासा को अपनी अनुभव शक्ति के अनुरुप मधुर रूप में ग्रहण किया है। ईश्वर को अपना प्रिय मानते समय छायावादी कवि ईश्वर की लिंग निरपेक्षता से अनेक स्थलों पर प्रभावित दिखाई देते हैं, जबकि कभी वे उसमें प्रेमी प्रेमिका का संबंध स्थापित करते हैं, कभी प्रेमिका का।[1]

वैदिक मान्यताओं को स्पष्ट करते हुए उपनिषदों में ब्रह्म, जीव और जगत स्वरूप, ब्रह्म की प्राप्ति के उपाय आदि का सविस्तार वर्णन किया गया है। उपनिषदों में आत्मा-परमात्मा का सम्बन्ध अनेक प्रकार से निरूपित है। इस दृष्टि से 'श्वेताश्वेतरोपनिद' में व्यक्त शरीर रूपी पीपल के पेड़ पर हृदय रूपी नीड़ में बैठे आत्मा रूपी पक्षियों का चित्र अत्यंत मनोहर है। 'कठोपनिषद् में परमात्मा और जीवात्मा के मध्य धूप और छाया का संबंध प्रतिपादित किया गया है। आत्मा के संबंध में उपनिषदों का सार यह है कि वह नित्य, अजर, अमर तथा अविनाशी है।' [2] कठोपनिषदकार के शब्दों में -" जीवात्मा को रथ का स्वामी तथा शरीर को ही रथ समझो, बुद्धि को सारथी तथा मन को ही लगाम समझो। ज्ञानीजन इन्द्रियों को घोड़े तथा विषयों को उन घोड़े के विचरने का मार्ग कहते हैं और इन्द्रियों तथा मन से युक्त जीवात्मा ही भोक्ता है।"[3] शरीर के नष्ट हो जाने से आत्मा में किसी प्रकार का विकार नहीं आता । 'इस आत्म-तत्व का ज्ञान अंतःकरण को परिशुद्धि के ही द्वारा होता है।'[4]

वेद, उपनिषद, गीता, ब्रह्मसूत्र आदि आस्तिक दर्शन हैं, किन्तु इसके विपरीत वेद तथा ईश्वर के प्रति अनास्थावादी तीन दर्शन हैं- चार्वाक, जैन और बौद्ध । हिन्दी साहित्य में प्रथम दो का प्रभाव नगण्य है, जबकि बौद्धमत ने अनेक साहित्यकारों की चेतना को प्रभावित किया है। जीवन को सुखपूर्ण व्यतीत करने की कामना बाले चार्वाक दर्शन में जगत से निवृत्ति के लिए कोई स्थान नहीं, इनमें परलोक सर्वथा अस्वीकृत है। चार्वाक मत में प्रत्यक्ष को ही प्रमाण माना गया है।

वैदिक कर्मकांड की अतिवादी हो जाने पर उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप गौतम बुद्ध द्वारा प्रवर्तित बौद्ध धर्म ने हिन्दी के अनेक साहित्यकारों को प्रभावित किया । अहिंसा, करुणा, प्राणिमात्र के प्रति सहानुभूति का भाव, मानवतावाद, सर्वात्मवाद विश्वबंधुत्व आदि उदात्त रूपों में जीवन और जगत में ग्रहीत हो जाने के कारण साहित्य जगत में अवतरित हो गए। बौद्ध-दर्शन में निर्वाण का अपना विशिष्ट महत्व है। यह आत्मा - परमात्मा के मिलन सदृश कोई स्थिति नहीं, बल्कि इस अवस्था में आर्य सत्यों आष्टांगिक मार्ग आदि का सम्यक् अनुशीलन करता हुआ जीव-धर्म-कर्म से निवृत हो जाता है, उसे न कोई अभाव होता है न प्राप्ति । इस निर्वाण का विवेचन दीपक के निर्वाण के रूप में भी किया गया है। छायावाद में दीपक का यह रूपक महादेवी प्रिय वर्मा का रूपक रहा है।

भारतीय दर्शन - परम्परा में शैव - दर्शन का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। शैवतंत्र की सात

उपधाराएँ हैं-पाशुपत मत, रसेश्वर दर्शन, व्याकरण दर्शन, वीर शैव-सिद्धांत, शैव सिद्धांत मत, प्रत्यभिजा दर्शन तथा त्रिपुरा सिद्धांत । इनमें से प्रत्यभिजा दर्शन का छायावाद के प्रवर्तक जयशंकर प्रसाद के दर्शन के साथ धनिष्ठ संबंध है। प्रत्यभिजा दर्शन के अनुसार एक ही परम तत्व है जो शिव और शक्ति का सामरस्य रूप है। इनके अनुसार जगत की उत्पत्ति नहीं होती, प्रकटीकरण होता है। जगत के सृजन की इच्छा होते ही परमतत्व के दो रूप हो जाते हैं-शिवरूप तथा शक्तिरूप।

वस्तुत: दोनों में गहरा अंत: संबंध है। यह स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया है कि शक्ति के अभाव में शिव का महत्व क्षीण पड़ जाता है-

शिव शक्तया युक्तों यदि भवति शक्तः प्रभवितु ।
न चेदेवं देवो न खलु कुशल: स्पन्दितुमपि ।।"[5]

'परमेश्वर के दो नाम हैं- सदाशिव और ईश्वर अंतर केवल यह है कि सदाशिव में शिव शक्ति का आंतर निमेष होता है। ईश्वर में बाह्य निमेष।'[6]

आधुनिक कालीन भारतीय बिचारधाराओं में स्वामी विवेकानंद के व्यावहारिक वेदांत, श्री अरविंद - दर्शन तथा गाँधीवाद ने छायाबादी कवियों को विशेष प्रभावित किया है। सांस्कृतिक, राष्ट्रीय, राजनीतिक सभी स्तरों पर देश विदेश में स्वामी विवेकानंद की विचारधारा का पर्याप्त प्रभाव पड़ा। भारतीय जनता में राष्ट्रीय भावबोध, स्वाभिमान आत्मगौरव की भावना का संचार करने के लिए उन्होंनें उपनिषदों का दृढ़ आधार ग्रहण किया। स्वयं उनके अनुसार - "मेरे उपदेश बेदांत की समता और आत्मा की विश्वव्यापकता इन्हीं सत्यों पर प्रतिष्ठित हैं।"[7] वस्तुत: 'वेदांत के आधारभूत सत्य 'आत्मविश्वास' को वे जनजीवन में उतारना चाहते थे तथा यही उनकी दृष्टि में वेदांत का व्यावहारिक स्वरूप था। वेदांत संबंधी उनकी इस मान्यता में नास्तिक वही है जो स्वयं पर विश्वास नहीं करता।'[8]

छायावादी कवियों में से पंत ने अरविन्द दर्शन का गहरा अध्ययन किया। अतः उनके काव्य में इसका सर्वाधिक प्रभाव दिखाई पड़ता है। श्री अरविन्द की समग्र विचारधारा का मूलाधार वेद है। उनके अनुसार - 'ब्रह्म के निष्क्रिय एवं सक्रिय दो रूप हैं, लेकिन उनमें परस्पर विरोध नहीं है। मानव में अनंत ब्रह्म के प्रति जिज्ञासा स्वाभाविक है, क्योंकि मनुष्य शांत प्रतीत होने वाला अनंत है और वह अनंत का अन्वेषण किये बिना नहीं रह सकता।'[9] जीव और ब्रह्म परस्पर अविच्छिन्न हैं। उनके अनुसार "यह अंश अपने दिव्य पूर्ण से अपृथक है, क्योंकि यह नियम है कि अनंत का अंश उससे पृथक् नहीं हो सकता।"[10] उन्हें जगत की सत्यता में भी विश्वास है। ये स्पष्ट स्वीकार करते हैं कि "केबल ब्रह्म सत्य है और जगत् मिथ्या है। ब्रहम सत्य है और जगत भी सत्य है।"[11] श्री अरविन्द ने 'दिव्यजीवन' की भी चर्चा की है। दिव्य जीवन मानव का चरम लक्ष्य है जो इसी जीवन में प्राप्त हो सकता है। उनके अनुसार- "जीवन में भगवान को चरितार्थ करना ही मनुष्य का मनुष्यत्व है।"[12] तदर्थ उन्होंनें साधना पर बहुत बल दिया ।

गाँधीजी की मान्याताओं ने समसामयिक जीवन में प्राणशक्ति का कार्य किया था। उनकी विन्चार-धारा में सत्य और अहिंसा का स्थान सर्वोपरि है। साथ ही विश्वबंधुत्व एवं मानव कल्याण की भावना गाँधीजी के विचार में प्रमुखता के साथ उपस्थित होती है।

चिंतन के विकास की दृष्टि से पाश्चात्य परम्परा का भी अपना निश्चित एवं पर्याप्त विकसित इतिहास है। पाश्चात्य दर्शनों में प्रभाव डालने की इष्टि से मानवतावाद का स्थान सर्वोपरि है। छायावाद को प्रभावित करने में सर्वात्मवाद का भी विशिष्ट महत्व है। लाइबनीज के अनुसार- 'जड़ वस्तु मिथ्या नहीं वह सुप्त जीव एवं चेतन प्राणी है, वह जीव की ज्ञान, क्रिया, इच्छाशक्ति से संयुक्त है। पश्चिम में ईश्वर तथा मानव के मध्य प्रेम संबंध की चर्चा उन्नीसवीं शताब्दी से ही की जाने लगी थी। पहले यह संबंध पति-पत्नि संबंध के रूप में था, बाद में इस माधुर्य संबंध के स्थान पर सखाभाव संबंध को रहस्यवाद का आधार बना लिया गया। छायावाद की अभिव्यक्ति का रूप इससे काफी प्रभावित रहा। हिन्दी साहित्य में यह प्रभाव रविन्द्रनाथ टैगोर आदि के बंगला साहित्य के माध्यम से भी पड़ा। जर्मन दार्शनिक हीगेल ने बुद्धि तथा विवेक को

अत्यधिक महत्व प्रदान किया है। इनका सिद्धांत यह है कि जो विवेकयुक्त है, वह वास्तविक है तथा जो वास्तविक विवेक युक्त है, वह विवेकयुक्त है। हीगेल ने आत्मा की सत्ता को स्वीकार किया है तथा उसे निरपेक्ष, पूर्ण एवं स्वतंत्र कहा है। कार्ल मार्क्स ने वैचारिक एवं व्यावहारिक क्षेत्र में परिवर्तन करने की दृष्टि से नवीन क्रांति का प्रतिपादन किया, जिसे मार्क्सवाद का नाम दिया गया। माक्स की विचारधारा का मूल स्त्रोत हीगेल का द्वन्द्वात्मक प्रत्ययवाद है। द्वन्द सिद्धांत को कार्लमार्क्स ने समाज के संदर्भ में वर्ग-संघर्ष के रूप में निरुपित किया है और मानव को सर्वोपरि मानते हुए विश्व को ईश्वर का हेतु कहा है। मार्क्स की कल्पना के समाज में ईश्वर स्वर्ग या नरक आदि के लिए कोई स्थान नहीं। मार्क्सवाद का प्रभाव यद्यपि छायावादोत्तर कविता पर दिखाई पड़ता है, तथापि छायावाद के निराला और पंत में भी उसका प्रभाव दृष्टिगत होता है।

निष्कर्षत : छायावादी कवि और कविता का गहरा अंतर्संबंध दर्शन के साथ रहा है। इस युग की कविता पर प्रमुखत: भारतीय दर्शन एवं गौणत: पाश्चात्य दर्शन का प्रभाव परिलक्षित होता है। दार्शनिक तत्वों को काव्यगत स्वरुप प्रदान करने में छायावादी कवि सबसे आगे हैं। इसलिए हम कह सकते हैं कि दार्शनिक संदर्भों के बिना छायावादी कविता का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है। दर्शन छायावाद का प्राण है। दर्शन छायावाद की नियति है। दर्शन छायावाद की परिणति है।

संदर्भ - ग्रंथ सूची :

1. छायावाद के सौ साल - प्रो0 सूर्यप्रसाद दीक्षित - पृ0-67.
2. वही, पृ0 - 77-78.
3. कठोपनिषद 3/3, 4.
4. वृहदारण्यक 4-4,19.
5. सौन्दर्य लहरी - श्लोक संख्या – 1.
6. ईश्वर प्रत्यभिज्ञा 3/1/3.
7. शक्तिदायी विचार - विवेकानंद, पृ0-20.
8. व्यावहारिक जीवन में वेदांत, पृ0-7.
9. दिव्य जीवन भाग -1, महर्षि अरविंद, पृ0 – 228.
10. वही, पृ0 – 211.
11. वही, पृ0-36.
12. To full-fill God in life is man's Manhood (The Life Divine, part-1, p-27).

•